दल-बदल विरोधी कानून

drishtiias.com/hindi/printpdf/anti-defection-law-1

इस Editorial में The Hindu, The Indian Express, Business Line आदि में प्रकाशित लेखों का विश्लेषण किया गया है। इस लेख में दल-बदल विरोधी कानून, उसकी आवश्यकता और प्रासंगिकता पर चर्चा की गई है। आवश्यकतानुसार, यथास्थान टीम दृष्टि के इनपुट भी शामिल किये गए हैं।

संदर्भ

हाल ही में घोषित कर्नाटक विधानसभा उप-चुनाव के नतीजो के साथ ही दल-बदल विरोधी कानून की प्रासंगिकता पर भी प्रश्नचिह्न लगता दिखाई दे रहा है। बीते दिनों कर्नाटक विधानसभा अध्यक्ष द्वारा अयोग्य करार दिये गए लगभग सभी विधायक हालिया उप-चुनावों में जीत कर मंत्री पद प्राप्त करने वाले हैं। चुनावी लोकतंत्र का यह घटनाक्रम स्पष्ट तौर पर दल-बदल विरोधी कानून में बदलाव की ओर इशारा करता है, क्योंकि इस घटनाक्रम ने चुनावी दलों के समक्ष दल-बदल विरोधी कानून के दुरुपयोग का एक उदाहरण प्रस्तुत किया है और संभव है कि ऐसी घटनाएँ भविष्य में भी देखने को मिलें।

दल-बदल विरोधी कानून क्या है?

- वर्ष 1985 में 52वें संविधान संशोधन के माध्यम से देश में ‘दल-बदल विरोधी कानून’ पारित किया गया। साथ ही संविधान की दसवीं अनुसूची जिसमें दल-बदल विरोधी कानून शामिल है को संशोधन के माध्यम से भारतीय से संविधान जोड़ा गया।
- इस कानून का मुख्य उद्देश्य भारतीय राजनीति में ‘दल-बदल’ की कुप्रथा को समाप्त करना था, जो कि 1970 के दशक से पूर्व भारतीय राजनीति में काफी प्रचलित थी।
- **दल-बदल विरोधी कानून के मुख्य प्रावधान:**
  दल-बदल विरोधी कानून के तहत किसी जनप्रतिनिधि को अयोग्य घोषित किया जा सकता है यदि:
    - एक निर्वाचित सदस्य स्वेच्छा से किसी राजनीतिक दल की सदस्यता छोड़ देता है।
    - कोई निर्दलीय निर्वाचित सदस्य किसी राजनीतिक दल में शामिल हो जाता है।
    - किसी सदस्य द्वारा सदन में पार्टी के पक्ष के विपरीत वोट किया जाता है।
    - कोई सदस्य स्वयं को वोटिंग से अलग रखता है।
    - छह महीने की समाप्ति के बाद कोई मनोनीत सदस्य किसी राजनीतिक दल में शामिल हो जाता है।

अयोग्य घोषित करने की शक्ति

- कानून के अनुसार, सदन के अध्यक्ष के पास सदस्यों को अयोग्य करार देने संबंधी निर्णय लेने की शक्ति है।

- यदि सदन के अध्यक्ष के दल से संबंधित कोई शिकायत प्राप्त होती है तो सदन द्वारा चुने गए किसी अन्य सदस्य को इस संबंध में निर्णय लेने का अधिकार है।

दल-बदल विरोधी कानून के अपवाद

कानून में कुछ ऐसी विशेष परिस्थितियों का उल्लेख किया गया है, जिनमें दल-बदल पर भी अयोग्य घोषित नहीं किया जा सकेगा। दल-बदल विरोधी कानून में एक राजनीतिक दल को किसी अन्य राजनीतिक दल में या उसके साथ विलय करने की अनुमति दी गई है बशर्ते कि उसके कम-से-कम दो-तिहाई विधायक विलय के पक्ष में हों। ऐसे में न तो दल-बदल रहे सदस्यों पर कानून लागू होगा और न ही राजनीतिक दल पर। इसके अलावा सदन का अध्यक्ष बनने वाले सदस्य को इस कानून से छूट प्राप्त है।

क्यों लाया गया दल-बदल विरोधी कानून?

- लोकतांत्रिक प्रक्रिया में राजनीतिक दल काफी अहम भूमिका अदा करते हैं और सैद्धांतिक तौर पर राजनीतिक दलों की महत्त्वपूर्ण भूमिका यह है कि वे सामूहिक रूप से लोकतांत्रिक फैसला लेते हैं।
- हालाँकि आज़ादी के कुछ ही वर्षों के भीतर यह महसूस किया जाने लगा कि राजनीतिक दलों द्वारा अपने सामूहिक जनादेश की अनदेखी की जाने लगी है। विधायकों और सांसदों के जोड़-तोड़ से सरकारें बनने और गिरने लगीं।
- 1960-70 के दशक में 'आया राम गया राम' की राजनीति देश में काफी प्रचलित हो चली थी। दरअसल अक्तूबर 1967 को हरियाणा के एक विधायक गया लाल ने 15 दिनों के भीतर 3 बार दल-बदलकर इस मुद्दे को राजनीतिक मुख्यधारा में ला खड़ा किया था।
- इसी के साथ जल्द ही दलों को मिले जनादेश का उल्लंघन करने वाले सदस्यों को चुनाव में भाग लेने से रोकने तथा अयोग्य घोषित करने की ज़रूरत महसूस होने लगी।
- अंततः वर्ष 1985 में संविधान संशोधन के ज़रिये दल-बदल विरोधी कानून लाया गया।

मौजूदा समय में कानून की प्रासंगिकता

पक्ष में तर्क

- दल-बदल विरोधी कानून ने राजनीतिक दल के सदस्यों को दल बदलने से रोक कर सरकार को स्थिरता प्रदान करने में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की है। 1985 से पूर्व कई बार यह देखा गया कि राजनेता अपने लाभ के लिये सत्ताधारी दल को छोड़कर किसी अन्य दल में शामिल होकर सरकार बना लेते थे जिसके कारण जल्द ही सरकार गिरने की संभावना बनी रहती थी। ऐसी स्थिति में सबसे अधिक प्रभाव आम लोगों हेतु बनाई जा रही कल्याणकारी योजनाओं पर पड़ता था। दल-बदल विरोधी कानून ने सत्ताधारी राजनीतिक दल को अपनी सत्ता की स्थिरता के बजाय विकास संबंधी अन्य मुद्दों पर ध्यान केंद्रित करने के लिये प्रेरित किया है।
- कानून के प्रावधानों ने धन या पद लोलुपता के कारण की जाने वाली अवसरवादी राजनीति पर रोक लगाने और अनियमित चुनाव के कारण होने वाले व्यय को नियंत्रित करने में भी मदद की है।
- साथ ही इस कानून ने राजनीतिक दलों की प्रभाविता में वृद्धि की है और प्रतिनिधि केंद्रित व्यवस्था को कमज़ोर किया है।

विपक्ष में तर्क

लोकतंत्र में संवाद की संस्कृति का अत्यंत महत्त्व है, परंतु दल-बदल विरोधी कानून की वज़ह से पार्टी लाइन से अलग किंतु महत्त्वपूर्ण विचारों को नहीं सुना जाता है। अन्य शब्दों में कहा जा सकता है कि इसके कारण अंतर-दलीय लोकतंत्र पर प्रभाव पड़ता है और दल से जुड़े सदस्यों की अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता खतरे में पड़ जाती है।

जनता का, जनता के लिये और जनता द्वारा शासन ही लोकतंत्र है। लोकतंत्र में जनता ही सत्ताधारी होती है, उसकी अनुमति से शासन होता है, उसकी प्रगति ही शासन का एकमात्र लक्ष्य माना जाता है। परंतु यह कानून जनता का नहीं बल्कि दलों के शासन की व्यवस्था अर्थात् 'पार्टी राज' को बढ़ावा देता है।

कई विशेषज्ञ यह भी तर्क देते हैं कि दुनिया के कई परिपक्व लोकतंत्रों में दल-बदल विरोधी कानून जैसी कोई व्यवस्था नहीं है। उदाहरण के लिये इंग्लैण्ड, ऑस्ट्रेलिया, अमेरिका आदि देशों में यदि जनप्रतिनिधि अपने दलों के विपरीत मत रखते हैं या पार्टी लाइन से अलग जाकर वोट करते हैं, तो भी वे उसी पार्टी में बने रहते हैं।

विभिन्न समितियाँ

- **दिनेश गोस्वामी समिति**
    - वर्ष 1990 में चुनावी सुधारों को लेकर गठित दिनेश गोस्वामी समिति ने कहा था कि दल-बदल कानून के तहत प्रतिनिधियों को अयोग्य ठहराने का निर्णय चुनाव आयोग की सलाह पर राष्ट्रपति/राज्यपाल द्वारा लिया जाना चाहिये।
    - संबंधित सदन के मनोनीत सदस्यों को उस स्थिति में अयोग्य ठहराया जाना चाहिये यदि वे किसी भी समय किसी भी राजनीतिक दल में शामिल होते हैं।
- **विधि आयोग की 170वीं रिपोर्ट:**
    - वर्ष 1999 में विधि आयोग ने अपनी 170वीं रिपोर्ट में कहा था कि चुनाव से पूर्व दो या दो से अधिक पार्टियाँ यदि गठबंधन कर चुनाव लड़ती हैं तो दल-बदल विरोधी प्रावधानों में उस गठबंधन को ही एक पार्टी के तौर पर माना जाए।
    - राजनीतिक दलों को व्हिप (Whip) केवल तभी जारी करनी चाहिये, जब सरकार की स्थिरता पर खतरा हो। जैसे-

        दल के पक्ष में वोट न देने या किसी भी पक्ष को वोट न देने की स्थिति में अयोग्य घोषित करने का आदेश।
- **चुनाव आयोग का मत:**
    - इस संबंध में चुनाव आयोग का मानना है कि उसकी स्वयं की भूमिका व्यापक होनी चाहिये।
    - अतः दसवीं अनुसूची के तहत आयोग के बाध्यकारी सलाह पर राष्ट्रपति/राज्यपाल द्वारा निर्णय लेने की व्यवस्था की जानी चाहिये।

किहोतो होलोहन बनाम ज़ाचिल्हू

(Kihoto Hollohan vs Zachillhu)

वर्ष 1993 के किहोतो होलोहन बनाम ज़ाचिल्हू वाद में उच्चतम न्यायालय ने फैसला देते हुए कहा था कि विधानसभा अध्यक्ष का निर्णय अंतिम नहीं होगा। विधानसभा अध्यक्ष का न्यायिक पुनरावलोकन किया जा सकता है। न्यायालय ने माना कि दसवीं अनुसूची के प्रावधान संसद और राज्य विधानसभाओं में निर्वाचित सदस्यों के लोकतांत्रिक अधिकारों का हनन नहीं करते हैं। साथ ही ये संविधान के अनुच्छेद 105 और 194 के तहत किसी तरह से अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का उल्लंघन भी नहीं करते।

आगे की राह

- दल-बदल विरोधी कानून को भारत की नैतिक राजनीति में एक ऐतिहासिक कदम के रूप में देखा जाता है। इसी कानून ने देश में ‘आया राम, गया राम’ की राजनीति को समाप्त करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की है। हालाँकि विगत कुछ वर्षों से देश की राजनीति में इस कानून के अस्तित्व को कई बार चुनौती दी जा चुकी है।
- वर्तमान में स्थिति यह है कि राजनीतिक दल स्वयं किसी महत्त्वपूर्ण निर्णय पर दल के अंदर लोकतांत्रिक तरीके से चर्चा नहीं कर रहे हैं और दल से संबंधित विभिन्न महत्त्वपूर्ण निर्णय सिर्फ शीर्ष के कुछ ही लोगों द्वारा लिये जा रहे हैं।
- आवश्यक है कि विभिन्न समितियों द्वारा दी गई सिफारिशों पर गंभीरता से विचार किया जाए और यदि आवश्यक हो तो उनमें सुधार कर उन्हें लागू किया जाए।
- दल-बदल विरोधी कानून में संशोधन कर उसके उल्लंघन पर अयोग्यता की अवधि को 6 साल या उससे अधिक किया जाना चाहिये, ताकि कानून को लेकर नेताओं के मन में डर बना रहे।
- दल-बदल विरोधी कानून संसदीय प्रणाली में अनुशासन और सुशासन सुनिश्चित करने में अत्यंत ही महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकता है, लेकिन इसे परिष्कृत किये जाने की ज़रूरत है, ताकि दुनिया का सबसे बड़ा लोकतंत्र सबसे बेहतर लोकतंत्र भी साबित हो सके।

प्रश्न: दल-बदल विरोधी कानून का वर्णन करते हुए उसकी प्रासंगिकता का मूल्यांकन कीजिये।